विपश्यना

साधकों का मासिक प्रेरणा पत्र

बुद्धवर्ष २५३० | आषाढ़ पूर्णिमा | २१ जुलाई १९८६ | वर्ष १६ अंक १

धम्म वाणी

महाकारुणिको नाथो हितायं सब्ब पाणिनं ।
पूरेत्वा पारमी सब्बा पत्तो सम्बोधिमुत्तमं ।।
– पुब्बाण्ह सुत्त

महाकारुणिक भगवान ने सब प्राणियों के हित–सुख के लिए समस्त पारमिताओं को परिपूर्ण कर उत्तम सम्बोधि प्राप्त की।

धर्मचक्र कथा

(१)

कपिलवस्तु की शाक्य देशीय पट्टमहिषी महामाया को एक रात एक सुखद स्वप्न आया। उसने देखा कि एक अत्यन्त भव्य शान्त श्वेत हाथी अपनी सूंड में एक प्रफुल्लित श्वेत कमल लिए हुए मधुर नाद करता हुआ शैया की तीन बार प्रदक्षिणा कर उसकी कोख में प्रवेश कर गया है। प्रातः महाराज शुद्धोधन ने यह बात सुनी तो स्वप्न का अर्थ जानने के लिए चौसठ लक्षणशास्त्रीय वेदज्ञ ब्राह्मणोंको आमंत्रित किया। उनमें से आठ ब्राह्मणों ने अत्यन्त निश्चयपूर्वक कहा कि महारानी ने गर्भ धारण किया है और उसके गर्भ में किसी महापुरुष ने प्रवेश किया है। इन आठों में एक था कौंडण्य जो कि इनमें सब से कम उम्र का युवा ब्राह्मण था। पर बड़ा मेधावी था। स्वप्नलक्षण और शरीरलक्षण विद्या में पारंगत था।

दस महीने पर जब महारानी ने पुत्र जन्मा तो महाराज शुद्धो–धन ने फिर एक सौ आठ वेदज्ञ ब्राह्मणों को आमंत्रित किया। बालक का भविष्य जानने की तीव्र उत्कंठा थी उसके मन में। उन्हीं आठ ब्राह्मणों ने अपनी विद्या के बल पर भविष्यवाणी की। उनमें से सात ने दो उँगलियाँ उठाईं और कहा कि यह बालक बड़ा होकर यदि गृहस्थ रहा तो समग्र देश का चक्रवर्ती सम्राट होगा और गृहत्यागी हुआ तो सम्यक् सम्बुद्ध होगा। युवा कौंडण्य ने बालक में महापुरुष की शरीरलक्षण संपदा देखी। उसने केवल एक उँगली उठाई और दृढ़तापूर्वक कहा कि इस बालक का केवल एक ही भविष्य है। यह गृहत्यागी होगा और सम्यक् सम्बुद्ध बनेगा। दूसरा कोई विकल्प नहीं।

कौंडण्य अब प्रौढ़ हो चला। अपनी भविष्यवाणी सिद्ध होने की उसने उनतीस वर्ष तक उत्कट प्रतीक्षा की। जब उसने सुना कि राजकुमार सिद्धार्थ गौतम राजमहलों के वैभव-विलास त्यागकर संन्यासी हो गया है तो उसके मन में तीव्र धर्मसंवेग जागा। राज–कुमार बत्तीस शरीर-लक्षणों का धनी है। समय पाकर वह अवश्य ही मुक्ति का मार्ग खोज निकालेगा और विवृत कपाट सम्यक् सम्बुद्ध बनेगा। क्यों न मैं भी अपना जीवन सार्थक कर लूं! इस महापुरुष के साथ तपूंगा तो जिस विद्या से वह जीवनमुक्त होगा उसी को अपनाकर मैं भी अपना जीवन सफल कर लूंगा।

कौंडण्य ने गृह त्यागने का निर्णय किया और उस समय उसे अपने सात अन्य ब्राह्मण साथी याद आये जिन्होंने गर्भ-प्रवेश और जन्म पर उसके समान भविष्यवाणी की थी। वे सातों उस समय भी बहुत वृद्ध थे। इन उनतीस वर्षों में आयु पकने पर एक एक करके सभी काल कवलित हो गये। वह उनके पुत्रों से मिला। सातों के एक-एक पुत्र थे। प्रत्येक को उसके पिता द्वारा की गई भविष्यवाणी याद दिलाई, जिसके अनुसार गृहत्यागने पर राजकुमार सम्यक् सम्बुद्ध होगा ही। क्यों न इसका लाभ उठाया जाय? उन सातों में से केवल चार ही कौंडण्य का साथ देने के लिए तैयार हुए। तीन ने कोई उत्साह नहीं दिखाया। कौंडण्य इन चारों के साथ तपस्वी राजकुमार की खोज में निकल पड़ा। कुछ दिनों के बाद ही उरुवेला क्षेत्र में बोधिसत्व सिद्धार्थ से इनकी भेंट हो गई। कौंडण्य और उसके साथी वप्प, भद्दिय, महानाम और अश्वजित, पाँचों ब्राह्मण-कुमार बुद्ध-अंकुर का साथ देने लगे। बड़े मनोयोग से उसकी सेवा करने लगे।

इसके पूर्व सिद्धार्थ तत्कालीन भारत के प्रसिद्ध ध्यानयोगी आलारकलाम तथा उद्दकरामपुत्र के यहाँ एक एक सप्ताह रुक कर आठों ध्यान समापत्तियाँ सीख चुका था। ये गहरी समाधियाँ उस समय के भारत के साधना-क्षेत्र की उच्चतम उपलब्धियाँ थी इन्हें प्राप्त करके भी बोधिसत्व ने देखा कि वह पूर्ण मुक्त नहीं हो सका है। अभी अन्तरमन की गहराइयों में अनेक जन्मोंकी संचित जड़ें संग्रहित हैं। भवंग-चित्त में विकारों की ये सुषुप्त जड़ें यह

अनुशय क्लेश, अनुकूल समय और पर्यावरण पाकर फिर अंकुरित हो सकती है। इस आलय चित्त के निरालय बने बिना, भव-मुक्ति नहीं। चित्त अपनी तल-स्पर्शी गहराइयों तक विकार विमुक्त हुए बिना भवनेती नहीं कटती। इन आठों ध्यान की साधना से मरने पर भवाग्र अरूप ब्रह्मलोक में जन्म होगा जहाँ असंख्य कल्पों का सुदीर्घ आयुष्य प्राप्त होगा; पर अन्ततः उसकी भी अवधि पूरी होने पर किसी न किसी सुषुप्त विकार की उदीरणा होने पर किसी न किसी लोक में फिर जन्म लेना होगा और यह भवचक्र चलता ही रहेगा। सुषुप्त चित्त में विकारों के रहते जन्म-मरण के चक्र से नितांत छुटकारा नहीं हो सकता। अतः कोई और ऐसा रास्ता अपनाना चाहिये जिससे कि चित्त नितान्त विमुक्त हो सके।

उन दिनों की एक बहुत प्रचलित मान्यता थी कि देह-दंडन से विकार-विमुक्ति होती है। बोधिसत्वने इसे भी आजमाकर देखना चाहा। वह काय-क्लेश की घोर दुष्कर तपश्चर्या में लग गया। कौंडण्य आदि पाँच साथियों ने लगभग छः वर्षों तक उसका साथ दिया; उसकी सेवा-परिचर्य्या की। बोधिसत्व का काय कष्टीय तप पराकाष्ठा तक जा चुका। उसने अपने शरीर को तीक्ष्ण कांटों की शय्या पर सुलाया। शीतकाल में अत्यन्त शीत और उष्णकाल में अत्यन्त उष्ण पर्यावरण में झुलसाया। ऐसे कृत्रिम कुंभक किये कि दृढ़तापूर्वक दीर्घकाल तक दम घुटा-घुटाकर, शरीर में शूल चुभनेवाली असह्य उदर-पीड़ा और शिरोपीडाएं पैदा की। उपवास किये तो ऐसे कि छः वर्षोमें अपने सुवर्ण वर्ण सुंदर शरीरको जर्जरित कर लिया। सारा शरीर हड्डियों का कंकाल मात्र बन गया; पर आध्यात्म लाभ कुछ नहीं हुआ। अनुशय चित्त-विकार कायम ही रहे। उनकी निर्जरा न हुई; उनका क्षय न हुआ। सारा श्रम निरर्थक साबित हुआ।

अब क्या करे? कोई एक रास्ता ढूंढना चाहिये। बोधिसत्व को बचपन की एक घटना याद आयी। उस दिन खेत जोतने और बोने का मंगल-महोत्सव था। प्रजा के साथ राजा भी खेत जुताई करता था। वही आरंभ करता था इस महोत्सव को! बड़े धूम-धाम के साथ, सजधज कर लोग इस आयोजन में सम्मिलित होते थे। राजा शुद्धोधन ने हल पकड़ा और जोतने का मंगल कार्य आरंभ किया। पुरुष-वर्ग उसके साथ जुड़ गया। महिलाएं दर्शकों की तरह चारों ओर एकत्र हो गई। शिशु राजकुमार की सेवा पर अनेक कुशल सेविकाएं नियुक्त थीं। वे भी इस मंगल उत्सव में राजकुमार को लेकर खेत के समीप पहुँचीं। शिशु राजकुमार को एक घने जम्बु वृक्ष के तले मुलायम गद्दे पर सुलाकर उसकी देखभाल करने लगीं। परन्तु उत्सव के आकर्षण ने उन्हें सेवाच्युत किया। वे सभी खेत के किनारे राजा द्वारा हल जोतने का उत्सव-मंगल देखने में तल्लीन हो गयीं। इधर शिशु राजकुमार जागा। किसी को समीप न देखकर पालथी मारकर बैठ गया और शीघ्र ही ध्यानावस्थित हो गया। अब उसे याद आया कि किस प्रकार उस समय वह केवल सांस को ही देखने लगा था। सहज स्वाभाविक सांस जैसे भी आ रहा था; जैसे भी जा रहा था; बस उसकी जानकारी पर मन लग गया था। सांस की कोई कसरत नहीं थी। सांस पर कोई नियंत्रण नहीं था। हठपूर्वक सांस रोकने का जरा भी आग्रह नहीं था। अनायास आते-जाते सांस को तटस्थ भाव से देखते-देखते किस प्रकार स्वतः कुंभक हो गया था! जरा भी घुटन नहीं थी। वह घंटों इसी प्रकार ध्यानावस्थित बैठा रहा।

उस ओर खेत पर महोत्सव का कार्यक्रम निर्बाध गति से चलता रहा। लोग उत्सव मंगल मनाते रहे। दासियाँ खेत की मेंड़ पर बैठी आमोद-प्रमोद में लीन रहीं। मध्यान्ह का सूरज ढल कर दूर पश्चिम की ओर लुढ़कने लगा; तब उन्हें होश आया। राजकुमार पेड़ के नीचे अकेला सो रहा है। ढलते हुए सूरज की तिरछी धूप उसे अवश्य कष्ट पहुँचाती होगी। वह दौड़ी दौड़ी जंबुवृक्ष के पास आयी। देखा, तो आश्चर्यचकित रह गई। शिशु राजकुमार पालथी मारे समाधिस्थ बैठा है और स्वयं प्रकृति उसकी देखभाल कर रही है। सूरज ढलने के कारण सभी पेडों की छाया पूरब की ओर लंबी फैल गयी थी; परन्तु महान आश्चर्य! इस अकेले जंबुवृक्ष की छाया वैसे ही गोलाकार छायी हुई थी; शिशु योगी पर चंदुवा-सा तना हुआ है। कहीं धूप का नामोनिशान नहीं। पिता शुद्धोधन ने भी जब यह चमत्कार देखा तो दूसरी बार श्रद्धा-विभोर हो अपने पुत्र को नमस्कार किया।

चमत्कार की बात, चमत्कार की बात! बोधिसत्व के लिये इस समय इसका कोई महत्त्व नहीं था। महत्त्व था साधना-विधि का। इस साधना-विधि को भी अपनाकर देखना चाहिये जो कि उसे अनायास ही शैशव अवस्था में सध गई थी। मैं फिर एक बार सहज स्वाभाविक सांस के आवागमन को निष्प्रयास साक्षीभाव से देखने का काम शुरू करूं; कौन जाने इसी से आगे का रास्ता खुल जाय और मुक्ति का मार्ग हाथ लग जाय।

परन्तु उसने सोचा, इस सहज मार्ग के लिये अतियों की साधना छोड़नी होगी। मृतपाय कृशकाय अवस्थामें ऐसी सम्यक् साधना नहीं हुआ करती। शरीर यथाआवश्यक स्वस्थ हो, सबल हो तो ही यह साधना सिद्ध होगी। युक्ताहार–विहार से काम शुरू करना होगा। उपवास की अतियों भरी साधना छोड़कर यथोचित आहार ग्रहण करना होगा। अतः भिक्षाटन द्वारा प्राप्त आहार ग्रहण किया और नया प्रयोग आरंभ किया।

यह देखकर कौंडण्य सहित पाँचों साथी विचलित हो उठे। उनकी दृष्टि में राजकुमार योगच्युत हुआ; तपभ्रष्ट हुआ; दुष्कर तपश्चर्या सहन न कर सका; अतः कष्ट त्याग कर आहार ग्रहण करने लगा। ऐसा व्यक्ति भला कैसे सम्यक् सम्बुद्ध हो सकता है? कौंडण्य को अपने लक्षणशास्त्र के ज्ञान पर बहुत आस्था थी और इस व्यक्ति में महापुरुष होने के बत्तीस के बत्तीस शरीरलक्षण विद्यमान हैं, सम्यक् सम्बुद्ध होने की पूरी संभावना है। इसी विश्वास के सहारे जीवन के उनतीस वर्ष प्रतीक्षा में गुजारे और पिछले छह वर्ष इसके सान्निध्य में, इसकी सेवामें गुजारे। पर अब तो आस्था की धरती हिल गई। नहीं, मेरा ज्ञान गलत रहा। यह व्यक्ति मुक्त अवस्था प्राप्त नहीं कर सकता। जब कौंडण्य का यह विश्वास डगमगा गया और उसीका मानस विचिकित्सा से, शंका–संदेह से भर उठा तो बाकी

चार साथियों का तो कहना ही क्या ! वे तो अपने अपने पिता की भविष्यवाणी के बल पर ही साथ हुए थे। उनकी आस्था सहज ही डगमगा उठी।

पाँचों ब्राह्मण कुमारों को अपनी अपनी परंपराजन्य दार्शनिक मान्यता की आसक्ति तो थी ही; साथ ही साथ शीलव्रत परामर्श याने अतियों की ओर ले जानेवाले शील तथा अतियों की ओर ले जानेवाले कठोर व्रतों के प्रति भी गहरी आसक्ति थी। अब मन में घोर विचिकित्सा भी पैदा हो गई। इस युवा योगी के प्रति, इसकी सफलता के प्रति, इसके द्वारा चुने गये नये मार्ग के प्रति शंका-संदेह पैदा हो गये; और परिणाम स्वरूप पाँचों के पाँचों बोधिसत्व को अकेला छोड़कर वाराणसी की ओर चल दिये। यह व्यक्ति मुक्ति-पथ का पथिक नहीं। कोई अन्य रास्ता देखेंगे।

इधर बोधिसत्व निष्ठापूर्वक सम्यक् साधना में लग गया। सम्यक् आहार से शरीर स्वस्थ सबल हुआ, सम्यक् साधना के अनुकूल हुआ तो वैशाख पूर्णिमा की रात बोधिवृक्ष के तले दृढ़तापूर्वक पालथी मारकर बैठ गया और आनापान की साधना शुरू कर दी। शुद्ध सांस के प्रति जागरूक रहते रहते चित्त एकाग्र होने लगा। रात्रि के प्रथम प्रहर में ही असंख्य पूर्वजन्म की स्मृतियाँ जाग उठीं और देखा कि न जाने कितनी बार विपश्यना साधना की है; परन्तु सम्यक् सम्बुद्ध बनने का संकल्प होने के कारण, तीसों पारमिताओं उप पारमिताओं की परिपूर्णता न होने के कारण इन्द्रियातीत अवस्था का साक्षात्कार न हो सका। अब समय पका है, सारी पारमिताएं पूर्णता को प्राप्त हो चुकी हैं। अंतर में जागी हुई पुरानी विपश्यना-साधना के सहारे काम करते करते रात्रि के अंतिम प्रहर में सारे अनुशय क्लेशों का, सुषुप्त आश्रवों का क्षय हुआ। आलय चित्त निरालय हुआ; विकार विमुक्त हुआ। सम्यक् सम्बोधि जागी। आश्रव-विहीन वीतराग योगी सम्यक सम्बुद्ध हो गया। भवनेती टूटी। यह अंतिम भव है। अब और जन्म नहीं होगा।

सम्बोधि पाने के बाद सात सप्ताह बोधिवृक्ष के तले अथवा उसके आसपास मुक्ति के परम सुख में बिताए और फिर जब सरसरी तौरपर संसार का चिंतन किया तो एक बार यूं लगा कि नाना प्रकार के मतमतान्तरों, दार्शनिक मान्यताओं, थोथे कर्मकांडों और सांप्रदायिक जंजालों की आसक्तियों में डूबे हुए लोग इस सूक्ष्म गंभीर धर्म को समझ ही नहीं पायेंगे; ग्रहण कैसे करेंगे? परन्तु फिर देखा कुछ लोग पके हुए हैं; उनके मानस पर जो आवरण हैं वे बहुत क्षीण हैं; उनकी पुण्य पारमिताएँ प्रबल हैं; ऐसे लोग धर्म का लाभ लेंगे। ऐसे लोगों को धर्म-रत्न प्रदान करना ही चाहिये। जो धर्म-चक्र मेरे भीतर चला और जिसने मेरा भवचक्र ध्वंस किया वही धर्म-चक्र अन्य लोगों के भीतर भी चलना चाहिये; सभी योग्य लोगों के भीतर चलना चाहिये। उन सब के भवचक्र विध्वंस होने चाहिये। बहुजन का हित-सुख सधना चाहिये।

इन लोकमंगल के भावों से भगवान सम्यक् सम्बुद्ध का मन आप्लावित हो उठा। धर्मचक्र प्रवर्तन का समय समीप आया।

(क्रमशः)

कल्याणमित्र
सत्यनारायण गोयन्का

वरिष्ठ सहायक आचार्य
श्री ग्रहम गैम्बी का देहावसान

विगत २७ जून को सिडनी में ग्रहम गैम्बी को देवगति प्राप्त हुई। एक समुन्नत विपश्यी साधक के अनुरूप ग्रहम ने अत्यन्त शान्त और प्रसन्न चित्त से शरीर त्याग किया।

मृत्यु के लगभग सवा महीने पूर्व १६ मई को ग्रहम के सिर में ट्यूमर का ऑपरेशन किया गया था। ऑपरेशन के एक दिन पूर्व और उसके पश्चात् लिखे गये अनेक पत्रों में उसके अंतर का साम्य-धर्म छलका पड़ता है। जीवन के अंतिम क्षण तक यही अपूर्व समता बनी रही। उसकी जीवन-संगिनी एन्न गैम्बी का धर्म-धैर्य भी प्रशंसनीय है। ग्रहम १९७१ में बोधगया के शिविर में गोयन्काजी के याने विपश्यना साधना के संपर्क में आया। तब से लेकर जीवन पर्यंत धर्मपथ पर आगे ही बढ़ता रहा; पीछे मुड़कर नहीं देखा। एक आवारा हिप्पी का जीवन जीनेवाला ग्रहम विपश्यना साधना से आमूलचूल बदल गया। लगभग दस वर्षों तक भारत में रहते हुए धर्म में पकता रहा और फिर गोयन्काजी के आदेश से स्वदेश लौटकर सद्गृहस्थ का धर्ममय जीवन जीने लगा। उसे सौभाग्य से एन्न जैसी परम साध्वी विपश्यी-साधिका धर्मपत्नी मिली और दोनों ने मिलकर अपनी आदर्श गृहस्थी जमाई। भारत आने के पूर्व वह ऑस्ट्रेलिया के एक प्रसिद्ध साप्ताहिक 'सन्डे हेराल्ड' में काम करता था। लौटकर फिर वहीं सेवारत हो गया और विपश्यना साधना से जागी हुई प्रबल प्रतिभा के बल पर इस पत्रिका का प्रमुख फीचर लेखक हो गया और सारे देश का एक प्रसिद्ध पत्रकार बन गया। समाज में और शासन में व्याप्त दुराचार को प्रकाश में लाकर उसका उन्मूलन करना ही उसके लेखों का प्रमुख विषय हो गया। वह समस्त ऑस्ट्रेलिया की आम जनता में इतना लोकप्रिय हुआ कि इस पत्रिका का प्रकाशन बढ़कर साढ़े छः लाख हो गया।

ग्रहम ने भारत में रहते हुए धम्मगिरि पर विपश्यना विश्व विद्यापीठ की स्थापना में और प्रारंभिक कठिनाइयों को झेलने में अपनी अमूल्य सेवाएँ दी। इसी प्रकार सिडनी के समीप नीलगिरि पर्वत पर विपश्यना साधना केन्द्र स्थापित करने में जुट गया। केन्द्रों में मिट्टी खोदने तथा शौचालय साफ करने से लेकर व्यवस्थापक और वरिष्ठ सहायक आचार्य के सभी दायित्व एक ही लगन से समताभाव में निभाना ग्रहम की अपनी विशेषता थी। ग्रहम का धर्ममय जीवन अनेकों के लिए प्रेरणा का कारण बनेगा।

उसके जीवन का एकमात्र उद्देश्य यही रहा कि कैसे विपश्यना साधना के प्रचार-प्रसार से विश्व के अनेकानेक दुखियारे लाभान्वित हों और दुःखमुक्त हों। उसकी यह धर्म कामना शीघ्र परिपूर्ण हो!

विश्वभर के विपश्यी-साधक व्यक्तिगत अथवा सामूहिक-साधना कर के ग्रहम के लिये अपने पुण्यफलों का संविभाग करें और उसकी धर्मकामना के फलीभूत होने का धर्म-संकल्प करें यही धर्मोचित है।

विदेशों में पूज्य गुरुजी के शिविर

इंग्लैंड : शिविर क्रमांक २७५; अगस्त १३ से २४

स्थल : Longley School, Longley Park, Norwich, Near London
Tel : (0508) 28120

संपर्क : Dorothy & Peter Dodd
11, Chantry Court, Hatfield Herts
AL 10 9 HS
Tel : (07072) 76644

ऑस्ट्रेलिया : शिविर क्रमांक २७६; सितम्बर १२ से २२

सतिपट्ठान शिविर; सितम्बर २२ से ३०
(केवल अनुमति प्राप्त पुराने साधकों के लिए)

संपर्क : Vipassana Meditation Centre,
Dhamma Bhumi, Blue Mountain
P. Box 103, Blackheath, NSW 2785
Tel : 047-877436

सामूहिक साधना

साधकों से अनुरोध है कि जहाँ कहीं सामूहिक साधना नियमित रूप से होती है, उसकापूरा प ता, समय व दिन स्पष्ट रूप से लिखकर सितम्बर के प्रथम सप्ताह तक भेज दें , ताकि उन्हें प्रकाशित कर सकें।

बम्बई में पुराने साधकों के लिए

१५ अगस्त, शुक्रवार दोपहर २ से ४ सामूहिक साधना का आयोजन किया गया है। उसके बाद पूज्य गुरुजो का प्रवचन व्हिडिओ कॅसेट द्वारा सुनाया जायेगा ।

विषय : ' विपश्यी साधक साधना में कैसे स्थापित हो सकते हैं। '

स्थान : नपु हॉल, चंदावरकर रोड, माटुंगा (पू.) मध्य रेल्वे

दूहा धरम रा

जद तक अंतरचित्त मँह, संचित रवै विकार।
भव भव भटकत ही रवै, हुवै न दुख सूं पार ।।

ब्रह्मलोक तक पूग कर, मिट्या न चित्त विकार।
भटकण ही भटकण रही, हुयो न भव सूं पार ।।

जद तक जड़ सूं ना कट्या, अन्तर भरया विकार ।
लोक लोक की भरमणा, सिरजै दुक्ख अपार ।।

सील बरत मँह उलझ कर, अटक गयो नादान।
बिन प्रग्या जाग्रत हुयां, कठै मुक्ति निर्वाण ।।

घणा त्रास तन नै दियो, किया घणा उपवास ।
चित निरमल होए बिना, कटै न भव का पास ।।

सांस घोट कर के मिल्यो, मिट्या न राग न द्वेस ।
बिन प्रग्या मँह स्थित हुयाँ, कटै न करमां क्लेस ।।

दोहे धरम के

इस व्याकुल संसार में, कहीं न सुख का सार।
जन जन मन उद्विग्न है, भरे अनेक विकार ।।

आलय चित में छिप रहे, सोये हुए विकार।
बिना निरालय चित हुए, होय न भव से पार ।।

शंका ही शंका करे, श्रद्धा जगे न रंच ।
बिन श्रद्धा, प्रज्ञा बिना, छूटे नहीं प्रपंच ।।

जन जन के कल्याण हित, कैसे करुणावान।
करी पारमी पूर्ण सब, बने बुद्ध भगवान ।।

मन मानस मैत्री जगी, करुणा जगी अपार।
धर्म चक्र ऐसा चले, सुखी होय संसार ।।

विपश्यना के योग से, प्रज्ञा जगे अनन्त ।
राग द्वेष सब के मिटें, होय दुखों का अंत ।।

मैसर्स मोतीलाल बनारसीदास
बंगलो रोड, जवाहर नगर, दिल्ली–११० ००७
की मंगल कामनाओं सहित

विपश्यना विशोधन विन्यास के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक : रामप्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी–४२२ ४०३. दूरभाष
मुद्रण स्थान : विपश्यना प्रेस, धम्मगिरि, इगतपुरी. टेलिफोन : ७६, १७६ . वार्षिक शुल्क रु. १०/– आजीवन शुल्क रु. १००/–

विपश्यना रजि. नं. 19156/71
पोस्टल रजि. नं. NS(M)16/86

आषाढ़ पूर्णिमा
July 1986

Licence No. NS 18
to post without pre payment

प्रेषक :
विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी–४२२४०३
(जि. नासिक, महाराष्ट्र, मध्य रेल्वे)